RESEARCH PAPER | Sanskrit | Volume : 6 | Issue : 1 | JANUARY 2016 | ISSN - 2249-555X

प्रमुख रूपकों में नारी पात्रों का प्रेम वर्णन

KEYWORDS

Mahavir Singh

Research, Hindi Department, Baba Mastnath University (B.M.U.), Rohtak (Haryana)-124001

प्रमुख रूपकों में नारी पात्रों का प्रेम वर्णन

प्रेम

प्रेम शब्द का सामान्य अभिप्राय एक व्यक्ति का दूसरे के प्रति मानसिक आकर्षण है। जब व्यक्ति दूसरे की भलाई के लिए अपने हित–अहित का ध्यान करना भूल जाता है तो वह प्रेम सच्चा प्रेम कहलाता है। प्रेम और आसक्ति या मोह दोनों अलग–अलग स्थिति होती हैं। आज जिसे व्यक्ति प्रेम कहते हैं, वह किसी दूसरे के साथ खुद को बांधने का, खुद की पहचान बनाने का एक तरीका है। किन्तु यह प्रेम नहीं है, यह आसक्ति है। कुछ व्यक्ति आसक्ति को ही प्रेम मानते हैं, परन्तु आसक्ति का प्रेम से कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रेम की तुलना एक पुष्प से कर सकते हैं। एक समय जब वह किसी के जीवन में अपना स्थान बनाता है, तो उसकी देखभाल करनी पडती है, उसको पोषण देना होता है, उसे खिलने के लिए उचित पर्यावरण की आवश्यकता होती है और उस पुष्प को हाथ में लेने पर उसे ध्यान से पकड़ा जाता है, जो कि एक जीवन है किन्तु मोह प्लास्टिक के फूल के समान है। यह बहुत ही सुविधाजनक है परन्तु जब यह किसी के जीवन में आता है तो चिंता और बेचैनी भी लाता है। जिससे डर, पागलपन आदि स्थिति पैदा होती है किन्तु प्रेम के विषय में ऐसा नहीं है। जब किसी इंसान से या वस्तु से प्रेम करते हैं, तो उस समय जब वे साथ होते हैं तो उनकी मौजूदगी का आनन्द ले सकते हैं और जब वे साथ नहीं हैं तो उनकी गैरमौजूदगी का भी आनन्द ले सकते हैं। प्रेम निजी लाभ, स्वार्थ के लिए नहीं है। प्रेम कोई सुख प्राप्त करने का साधन नहीं है। सच्चा प्रेम तो खुद को मिटाने का तरीका है। इसमें व्यक्ति को अपने स्वयं के एक हिस्से को, अपने इस 'मैं' को छोड़ना पड़ता है। यदि प्रेमी के साथ एक होना चाहते हैं, परन्तु भौतिक स्तर पर यह बस कुछ पल के लिए होता है। वस्तुतः प्रेमी के लिए एकाकार होने का अर्थ है भौतिकता से परे जाना।

महाकवि भास के अविमारक नाटक में अविमारक के प्रेम में कुरङ्गी की मनःस्थिति अत्यन्त ही बिगड़ती जा रही थी। वह सच्चा प्रेम करती थी। कुरङ्गी के परिजनों ने इस स्थिति का प्रतिकार करने की इच्छा से प्रेरित होकर अविमारक के साथ कुरङ्गी के गुप्तमिलन का निश्चय किया तथा अविमारक के घर का पता लगाया। इससे कुरङ्गी के सच्चे प्रेम के विषय में ज्ञान होता है।

भास के नाटक स्वप्नवासवदत्तम् में राजा उदयन की पत्नी वासवदत्ता की उदारता के वर्णन में पतिपरायणता के आदर्श रूप की झलक है। वह सती–साध्वी महिला के रूप में सामने आती है और पतिप्रेम के लिए अद्‌भुत परित्याग का उदाहरण प्रस्तुत करती है। मगध नरेश दर्शक की बहन पद्‌मावती के लावण्य से वासवदत्ता स्वयं प्रभावित होते हुए भी उसके साथ किसी प्रकार का नारीजन सुलभ सपत्नी द्वेष नहीं रखती अपितु वह स्वयं पद्‌मावती के साथ राजा उदयन का पाणिग्रहणसंस्कार कराने में सहयोग प्रदान करती है।

मृच्छकटिकम् नाटक की नायिका वसन्तसेना में त्याग, प्रेम, दया, करुणा एवं ममता की भावना कूट–कूट कर भरी हुई है। वह उज्जयिनी की अत्यन्त धन समृद्धि तथा सौन्दर्य से युक्त एक गणिका होते हुए भी निर्धन साधारण व्यक्ति चारुदत्त से बहुत अधिक और सच्चा प्रेम करती है। वह प्रेम की बलि–वेदी पर तन–मन–धन अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। मदनिका द्वारा चारुदत्त के निर्धन बताने पर वह कहती है कि "अत एव काम्यते ! दरिद्रपुरुषसंक्रान्तमनाः खलु गणिका लोके अवचनीया भवति।"

वसन्तसेना शकार से प्रेम का महत्त्व बतलाती है कि प्रेम गुण से होता है न कि बलात्कार से।

वसन्तसेना चारुदत्त से प्रेम करती है एवं चारुदत्त की पत्नी धूता से भी ईर्ष्या न करके उससे प्रेम करती है तथा उसको सम्मान देती हुई कहती है –

> "अहं श्री चारुदत्तस्य गुणनिर्जिता दासी, तदा युष्माकमपि"
> वसन्तसेना रोहसेन को भी अपने पुत्र के समान प्रेम करती है।
> "अभिज्ञानशाकुन्तल" में शाकुन्तला के प्रति उसकी दोनों सखियों का

प्रेम सात्विक ही है। शकुन्तला का दुष्यन्त के लिए बैचेन होने पर दोनों सखियाँ उसके मनोरथ को शीघ्र व गुप्तरूप से सम्पन्न करने का उपाय सोचती हैं और शकुन्तला को प्रेम पत्र लिखने की सलाह देती हैं।

हे अनसूये ! अब प्रेम पत्र लिखवाया जाये। मैं उसे फूलों में छिपाकर देवता के प्रसाद के बहाने उस राजा के हाथ में पहुँचा दूँगी।

अनसूया और प्रियंवदा दुर्वासा ऋषि के शाप देने पर उससे अनुनय विनय करके शाप को कम करवाती हैं और अपनी सखी के लिए चिन्तित भी रहती हैं। विदाई के अवसर पर वे दोनों उसके विदा होने पर बैचेन हैं तथापि प्रियंवदा के सात्विक भाव इस प्रकार व्यक्त हुए कि वे कहती हैं कि 'हम तो अपने आप को यथा–तथा समझा लेगीं पर वह तो किसी प्रकार खुश रहे।'

इस प्रकार कवि ने प्रेम के सात्विक व नैतिक पक्ष पर बल दिया है।

मालती–माधव नाटक में मालती माधव से बहुत अधिक प्रेम करती है और वह नहीं चाहती कि उसका विवाह बूढ़े नन्दन के साथ हो परन्तु वह अपने पिता की इच्छाओं का विरोध नहीं करती है। उसे अपनी कुल–मर्यादा तथा माता–पिता का पूर्ण ध्यान है। उसके लिए उनकी प्रसन्नता के सामने अपने दुःख का कोई भी स्थान नहीं है। मालती का चित्त हमेशा माधव के प्रति अनुरक्त है और मृत्युकाल उपस्थित होने पर भी वह उसी का स्मरण करती है। जब कपालकुण्डला उसे वध्य बनाती है और अन्त में अपने प्रिय का स्मरण करने को कहती है तो मालती अपने प्रेम की प्राकाष्ठा को माधव के प्रति व्यक्त करती है।

मालती का अपनी सखियों के प्रति व्यवहार भी निश्छल एवं सरल है। वह लवङ्गिका से अपने हृदय की बात स्पष्ट रूप से बताती है। लवङ्गिका से उसका इतना प्रेम है कि जब नन्दन के घर से उसके आने में विलम्ब होता है तो वह व्याकुल हो जाती है और उस समय माधव की प्रेमपूर्ण बातें भी उसे रुचिकर नहीं लगती।

नागानन्द नाटक में मलयवती की तपोमयी भक्ति और प्रेम का ही वह प्रभाव है कि उसके मृत पति को जीवित करने के लिए स्वयं गौरी का प्राकट्य घटनास्थल पर होता है। उसके तप का प्रभाव बताने के लिए ही नाटककार ने गौरी के प्रादुर्भाव की अद्‌भूत रस समन्वित योजना नाटक के अन्तिम दृश्य में ही की है अन्यथा वैसे तो गरुड कृत अमृत वर्षा से भी जीमूतवाहनादि जीवित हो सकते थे। मलयवती गौरी की अनन्य उपासिका है और अपनी भक्ति से उन्हें प्रसन्न करती है। उसकी भक्ति अनुरूप वर प्राप्ति की कामना से होने के कारण सकाम किन्तु इससे उसके हृदय की सात्विक श्रद्धा, प्रेम, उच्चता एवं महत्त्वांकाक्षा का पता चलता है।

नागानन्द नाटक में जीमूतवाहन और शंखचूड की वृद्धा माताएँ केवल अपने स्वाभाविक प्रेम की अभिव्यक्ति करती हैं। शंखचूड की माता की स्वाभिमानिता और सत्यनिष्ठा भी उल्लेखनीय है। जीमूतवाहन जब उससे वध्य चिह्न मांगता है तो उसका उत्तर ऊँचे चरित्र को अच्छी प्रकार से झलका देता है।

बालरामायण में सीता स्वयंवर में रावण के द्वारा धनुष उठाये जाने पर मन ही मन में कहती हैं कि माँ वसुन्धरे मुझ पर प्रसन्न हो जाओ। सीता कह रही है कि रावण के धनुष चढ़ाने के पहले मुझे अपने में समा जाने के लिये स्थान दे देना। वह अद्वितीय सुन्दरी हैं, रावण उनको देखकर कहता है यह सच है कि ब्रह्मा का सृष्टिक्रम भी उनके समक्ष नीरस हो गया है। स्वयंवर में सीता को देखकर राम भी सस्पृह हो जाते हैं। यह धीर और गम्भीर भी हैं। वनवास के समय कहती हैं कि राजाओं के मान्य पिताजी या इन्द्र के मित्र श्वसुर जी से मेरा क्या प्रयोजन ? मेरे प्रिय निवास स्थान पर्वत और वही वन प्रदेश हैं। जहाँ कौशल्यापुत्र के चरणों की वन्दना करके आनन्द पा सकूं।

प्रियदर्शिका नाटिका में वासवदत्ता वत्सराज की महिषी हैं अन्तःपुर में उसकी अखण्ड प्रभुसत्ता है और अपनी भ्रमर वृत्ति के लिए वत्सराज उसे पैरो में गिरकर मनाता है। वत्सराज के प्रति उसका प्रेम सच्चा और अगाध है, किन्तु वह उसके हृदय पर एकच्छत्र अधिकार चाहती है। राजा की रसिकता से वह भली–भाँति परिचित है। इसलिए आरण्यिका को उसकी दृष्टि से बचाकर रखती है। स्वाभिमान से समृद्ध उसका अधिकार प्रयोग दृढ़ एवं आपाततः कठोर भी है। इसी कारण विदूषक अपने परिहासवदन में उसे देवी चण्डी कहता है। वसन्तोत्सव में पति का पूजा–सत्कार करके और विदूषक को स्वस्ति वाचन द्रव्य देकर वह अपने पतिप्रेम एवं धर्मनिष्ठा का परिचय देती है।

मालविकाग्निमित्र की देवी धारिणी जैसी उज्ज्वल त्याग भावना प्रियदर्शिका की वासवदत्ता में नहीं है। मालविकाग्निमित्र नाटक में आदर्शात्मक चरित्र–चित्रण का विशेष अवकाश नाटककार को रहता है। इस प्रकार अन्य नाटककारों ने भी प्रेम का विस्तृत वर्णन किया।

REFERENCE

अविमारक, द्वितीयांक द्य स्वप्नवासवदतम् – चतुर्थांक, तृतीयांक द्य मृच्छकटिकम्, द्वितीय अंक द्य गुणः खल्वनुरागस्य कारणम्, न पुनर्बलत्कारः। वही द्य मृच्छकटिकम् – षष्ठांक द्य एहि मे पुत्रक ! आलिङ्ग। वही द्य अनसूये। मदनलेख इदानीं क्रियताम्। द्य तं सुमनोगोपितं कृत्वा देवताशेषापदेशेन तस्य राज्ञो हस्ते प्रापयिष्यामि। द्य – अभिज्ञान० तृतीयो•ङ्क पृ० 105 द्य सखि ! प्रियं मे प्रियं मे ! किं त्वद्यैव शकुन्तलानीयत इत्युत्कण्ठासाधारणं खल्विदानां परितोषं समुद्वहामि। आवां तावदुत्कण्ठां विनोदयिष्यावः। सेदानी निर्वृता भवतु अभिज्ञान० चतुर्थो•ङ्क पृ० 127 द्य हा देव माधव ! परलोकगतो•पि युष्माभिः स्मर्तव्यो•यं जनः। द्य न खलु स उपरतो यस्य वल्लभः स्मरति। – मालतीमाधव 5.15 द्य नागानन्द – 4.14 के पश्चात् वृद्धा का कथन। द्य अम्ब वसुन्धरे ! प्रसीद। सीता विज्ञापयति – प्रथमं मे अन्तरं देहि पश्चाद्रावणो धनुरारोपयतु। द्य – बालरा 1, पृ० 33 द्य यत्सत्यं पुनरुक्तवस्तुविरसः सर्गक्रमो वेधसः। – वही, पृ० 2/17 द्य वहतु धनुरसङ्गादैक्षव वैणवं वा प्रहरतु च पृष्तकैः कौसुमैरायसैर्वा। द्य तदपि मकरकेतुमूर्ध्नि धन्वीश्वराणामिहमिह युवमावं यावदङ्गीकरोति।। वही, 3/22 द्य किं तादेण नरेन्द्रशेखर शिखालीढाग्रपादेण मे ? किं या मे श्वशुरेण वासवसमासिहासनार्द्धासिना उद्देसा गिरिणो अ ते वणमही सा चेअ मे वल्लहा कोसल्लातणअस्स जत्थ चलणे वन्दामि णंदामिअ, द्य – वही, 6.19 द्य